

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय सुरक्षित: 18.01.2024

निर्णय उद्घोषित: 05.02.2024

आ.प्र.अ. 523/2018, सि.वि.आ. 46951/2018 - 26 दिनों में अपील दायर

विजेंदर सिंह

..... अपीलार्थी

द्वारा: श्री सुनील चौधरी, श्री ललित कुमार एवं श्री प्रवीन सिंह, अधिवक्तागण

बनाम

राज्य व अन्य

.....

प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री आर.एस. मिश्रा, श्री आनंद मिश्रा, अधिवक्तागण प्र-3 की ओर से।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री शालिंदर कौर

निर्णय

1. वर्तमान प्रथम अपील विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, साकेत न्यायालय, नई दिल्ली (इसके बाद इसे विचारण न्यायालय के रूप में संदर्भित किया जाता है) द्वारा प्रोबेट मामला सं. 5972/2016 शीर्षक "विजेंदर सिंह उर्फ बिजेंदर सिंह बनाम राज्य व अन्य" में पारित उस आदेश दिनांक 26.04.2018

को चुनौती देती है जिसमें विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी की प्रोबेट याचिका को खारिज कर दिया था।

वर्तमान मामले के प्रासंगिक तथ्यों पर ध्यान देना उचित है जो इस प्रकार हैं:-

2. अपीलार्थी ने अपीलार्थी की मां श्रीमती लाडो, द्वारा दिनांक 04.04.2007 को निष्पादित वसीयत के संबंध में प्रोबेट देने के लिए भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (इसके बाद "अधिनियम" के रूप में संदर्भित) की धारा 276 के तहत एक याचिका दायर की थी दोनों संपत्तियों के संबंध में मकान सं. 20, गांव खिजराबाद, नई दिल्ली - 110065 जिसका माप 550 वर्ग गज तथा मकान सं. 5-बी, गांव खिजराबाद, नई दिल्ली-110065 जिसका माप 1000 वर्ग गज है, जिसमें याचिकाकर्ता की मां ने अपीलार्थी को उपर्युक्त वसीयत का एकमात्र निष्पादक नियुक्त किया था।

3. प्रत्यर्थी सं. 3 विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष एकमात्र प्रतिस्पर्धी प्रत्यर्थी था जिसने प्रोबेट याचिका में जारी नोटिस की तामिल के बाद अपनी आपत्तियां दर्ज की थीं। प्रत्यर्थी सं. 3 ने वसीयत को चुनौती देते हुए दावा किया है कि संपत्ति सं. 5-बी, ग्राम खिजराबाद, नई दिल्ली-110065 का मालिक है तथा उसने संपत्ति 1979 से कुछ समय पहले खरीदी थी तथा संपत्ति सं. 20 ग्राम खिजराबाद, नई दिल्ली - 110065 का सह-मालिक है क्योंकि यह पैतृक संपत्ति है एवं श्रीमती लाडो की स्व-अर्जित संपत्ति नहीं है।

4. प्रत्यर्थी सं. 3 ने प्रस्तुत किया कि वसीयत एक जाली दस्तावेज है क्योंकि वसीयतनामा पर वसीयतकर्ता के अंगूठे का निशान असली नहीं है तथा उसे संबंधित संपत्तियों के संबंध में वसीयत निष्पादित करने का कोई अधिकार नहीं है।

5. प्रत्यर्थी नं. 3 ने यह प्रस्तुत किया है कि वर्तमान प्रोबेट याचिका अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थीगण सं. 2, 4 एवं 5 के रूप में सूचीबद्ध अन्य प्रत्यर्थीगण की मिलीभगत की मदद से दायर की गई थी। उसने इस बात पर जोर दिया कि प्रोबेट याचिका पोषणीय नहीं है तथा याचिका को खारिज करने की प्रार्थना की है।

6. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, दिनांक 15.05.2013 को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा निम्नलिखित मुद्दे विरचित किए गए थे।

क. क्या स्वर्गीय श्रीमती लाडो द्वारा निष्पादित वसीयत दिनांक 04.04.2007 वैध एवं विधिक रूप से निष्पादित है? ओपीपी

ख. क्या वादी दिनांक 04.04.2007 की वसीयत के संबंध में प्रोबेट देने का हकदार है? ओपीपी

ग. क्या प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से दायर आपत्तियां वैध एवं पोषणीय हैं? ओपीआर

घ. राहत"

7. अपने दावे के समर्थन में अपीलार्थी ने स्वयं को अभि.सा.-1, श्री कमल कुमार शर्मा (वसीयत के साक्षियों में से एक) को अभि.सा.-2 तथा श्री ज्ञानेंद्र सिंह (अपीलार्थी का भाई) अभि.सा.-3 के रूप में पेश किया। प्रत्यर्थी सं. 3 प्रतिरक्षा का एकमात्र साक्षी है, जिसकी जांच प्र.-3सा.-1 के रूप में की गई है, हालांकि, अन्य प्रत्यर्थीगण ने प्रतिरक्षा के कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किये हैं।

8. पक्षकारों के साक्ष्यों को दर्ज करने के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों पर विचार करने के बाद अपीलार्थी के खिलाफ तथा प्रत्यर्थीगण के पक्ष में मुद्दा सं. 1 व 2 पर निष्कर्ष दिये, लेकिन मुद्दा सं. 3 अपीलार्थी के पक्ष में तथा प्रत्यर्थी के खिलाफ निर्णय दिया। प्रत्यर्थीगण ने प्रोबेट याचिका के साथ-साथ प्रत्यर्थी सं. 3 की आपत्तियों को खारिज कर दिया।

याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुतियाँ

9. विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों पर निम्नलिखित आधारों पर सवाल उठाए जाते हैं।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री सुनील चौधरी द्वारा उठाया गया प्रथम अभिवचन यह है कि विद्वान विचारण न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि प्रश्नगत वसीयत कानूनी रूप से लागू करने योग्य दस्तावेज है, हालांकि, उसने नाम में प्रकट होने वाले मामूली विरोधाभास पर आक्षेपित निर्णय पारित किया। वह कातिब (स्क्राइब) जो प्रमाणित साक्षी भी नहीं है। अपीलार्थी

एक वरिष्ठ नागरिक है तथा वसीयत 10 साल पहले निष्पादित की गई थी, इसलिए, यह एक त्रुटि है, क्योंकि किसी भी साक्ष्य के लिए लंबे समय के बाद अधिवक्ता के नाम जैसे तथ्यों को सही ढंग से याद कर पाना मुश्किल हो जाता है।

11. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विद्वान विचारण न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि जब तक आपत्तियां स्थापित नहीं हो जाती हैं, तब तक वसीयत के प्रतिपादक को वसीयत के आधार पर प्रोबेट देने से इनकार नहीं किया जा सकता है, जिसे विधिवत निष्पादित किया गया है तथा प्रमाणित साक्षी द्वारा सिद्ध किया गया है। दरअसल, वर्तमान मामले में, किसी भी प्रत्यर्थी ने वसीयत की वैधता एवं निष्पादन पर कोई आपत्ति नहीं जताई है।

12. आगे यह प्रस्तुत किया गया कि वसीयत के निष्पादन के संबंध में किसी भी संदिग्ध परिस्थितियों के अभाव में, वसीयत की वास्तविकता सिद्ध करने की जिम्मेदारी का निर्वहन करने हेतु वसीयत की क्षमता का प्रमाण तथा वसीयतकर्ता के अंगूठे का निशान, जैसा कि विधि द्वारा आवश्यक है, का निर्वहन करना होगा, जो वर्तमान में अपीलार्थी पर मामला सफलतापूर्वक सिद्ध हो चुका है। प्रत्यर्थीगण द्वारा इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि वसीयत निष्पादित करते समय वसीयतकर्ता मानसिक एवं शारीरिक रूप से दुरुस्त नहीं था।

13. यह प्रस्तुत किया गया था कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अनावश्यक रूप से मामूली विरोधाभासों पर भरोसा किया है कि अपीलार्थी प्रश्नगत वसीयत

के संबंध में प्रोबेट देने का हकदार नहीं था। भले ही, वसीयतनामा के अंगूठे के निशान की वास्तविकता पर विवाद नहीं किया जा सकता है, इसलिए, अपीलार्थी ने अधिनियम की धारा 63 के अनुसार वसीयत के निष्पादन को विधिवत सिद्ध किया है। **जानकी नारायण भोड़र बनाम नारायण मंडेयो कदम**; (2003) 2 एससीसी 91 एवं **गिरजा दत्त सिंह बनाम गंगोत्री दत्त सिंह**; एआईआर 1955 343 के निर्णयों पर भरोसा जताया गया था।

14. विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि अभिलेख पर साक्षियों के परिसाक्ष्य यह सिद्ध करते हैं कि वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत अपीलार्थी तथा श्री कुणाल शर्मा की उपस्थिति में निष्पादित की गई थी हालाँकि, विद्वान विचारण न्यायालय उपरोक्त सभी तथ्यों पर विचार करने में विफल रहे तथा विचार किये बिना प्रोबेट याचिका को खारिज कर दिया गया।

15. याचिकाकर्ता ने "मधुकर डी शेंडे बनाम ताराबाई शेडेज" (2002) 2 एससीसी 85, "श्रीमती इंदु बाला बोस व अन्य बनाम महिंद्रा चंद्र बोस व अन्य" (1982) 1 एससीसी 20, "हर्मेस व अन्य बनाम हिकसन: प्रिवी काउंसिल" (अपील सं. 67/1943 (कनाडा का सर्वोच्च न्यायालय) एआईआर 1946 पीसी 156, "थायम्मल बनाम पोन्नसामी व अन्य" (2008) 8 एमएलजे 647 और "जरात कुमारी दस्सी बनाम बिसेसुर दत्त" आईएलआर 39 कैल 245 पर भी भरोसा जताया है।

प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से प्रस्तुतियाँ:

16. प्रत्यर्थी सं. 3, की ओर से, श्री आर.एस. मिश्रा विद्वान अधिवक्ता ने इस बात पर जोर दिया कि अपीलार्थी अपनी मां की मृत्यु के बाद अपने द्वारा बनाई गई जाली एवं कूटरचित वसीयत के आधार पर पूरी पैतृक संपत्ति को अपना बताकर हड़पने की कोशिश कर रहा है। ऐसा कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने शीर्षक **जानकी नारायण भोईर बनाम नारायण मंडेओ कदम (2003) 2 एससीसी 91** के निर्णयों में निर्धारित कानून को गलत तरीके से प्रस्तुत किया है तथा घटनाओं का सही क्रम स्थापित करने में सक्षम नहीं है। वसीयत के क्रियान्वयन को लेकर संदिग्ध परिस्थितियाँ स्पष्ट हैं जिन्हें नकारा नहीं जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में कोई अवैधता नहीं है जिसे बरकरार रखा जाना आवश्यक है।

17. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एआईआर 2020 सर्वोच्च न्यायालय 2614 में रिपोर्ट किए गए **कविता कंवर बनाम श्रीमती पामेला मेहता** के मामले में वसीयत पर कानून को एक पुनः संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है:

‘23. यह सामान्य बात है कि वसीयत एक वसीयतनामा दस्तावेज़ है जो वसीयतकर्ता की मृत्यु के बाद लागू होता है। इस तरह के दस्तावेज़ की विशिष्ट प्रकृति के कारण कानून में वसीयत बनाने और न्यायालय में इसके साक्ष्य के लिए गंभीर प्रावधान किए गए हैं। उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 59 में यह प्रावधान है कि प्रत्येक स्वस्थचित व्यक्ति, जो अवयस्क नहीं है, वसीयत द्वारा अपनी संपत्ति का व्ययन कर सकता है। एक वसीयत या उसका कोई भी भाग, जिसका निर्माण धोखाधड़ी या जबरदस्ती या किसी ऐसी दृढ़ता के कारण हुआ है जिसने वसीयतकर्ता की स्वतंत्र

एजेंसी को छीन लिया है, उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 61 के तहत अमान्य घोषित किया जाता है; तथा इसके अलावा, उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 62 वसीयत निर्माता को किसी भी समय वसीयत बनाने या बदलने में सक्षम बनाती है जब वह वसीयत द्वारा अपनी संपत्ति का निपटान करने में सक्षम होता है। उत्तराधिकार अधिनियम अध्याय के भाग का विशेषाधिकार रहित वसीयतों के निष्पादन का प्रावधान करता है (जैसा कि अध्याय में प्रदान की गई विशेषाधिकार प्राप्त वसीयतों से अलग है) जिससे हम इस मामले में चिंतित नहीं हैं।

23.1. *** **

23.2. *** **

23.3. जैसा कि देखा गया है, उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 के अनुसार, वसीयत को दो या दो से अधिक साक्षियों द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए। इसलिए, वसीयत के रूप में प्रस्तावित किसी भी दस्तावेज़ को साक्ष्य के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता है जब तक कि इसके कार्यान्वयन को सिद्ध करने के उद्देश्य से कम से कम एक प्रमाणित साक्षी की जांच नहीं की गई हो, यदि ऐसा साक्षी उपलब्ध है तथा साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 की आवश्यकताओं के अनुसार साक्ष्य देने में सक्षम है। जो इस प्रकार है:-

68. दस्तावेज़ के निष्पादन का प्रमाण कानून द्वारा प्रमाणित किया जाना आवश्यक है। - यदि किसी दस्तावेज़ को विधि द्वारा प्रमाणित किया जाना आवश्यक है, तो इसका साक्ष्य के रूप में तब तक उपयोग नहीं किया जाएगा जब तक कि इसके निष्पादन को सिद्ध करने के उद्देश्य से कम से कम एक प्रमाणित साक्षी को नहीं बुलाया गया हो, यदि कोई

जीवित साक्षी हो, तथा न्यायालय की प्रक्रिया के अधीन हो और साक्ष्य देने में सक्षम हो:

बशर्ते कि किसी दस्तावेज़ के निष्पादन के साक्ष्य में एक प्रमाणित साक्षी को वसीयत न होने की स्थिति में बुलाना आवश्यक नहीं होगा, जिसे रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 (16/1908) के प्रावधानों के अनुसार पंजीकृत किया गया है, जब तक कि इसका जिस व्यक्ति द्वारा इसे निष्पादित किया जाना माना जाता है, उसके द्वारा निष्पादन को विशेष रूप से अस्वीकार कर दिया गया है।

24. अब हम किसी वसीयत की जांच की प्रक्रिया के संबंध में न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाने पर लगातार निर्णयों द्वारा तय किए गए प्रासंगिक सिद्धांतों पर ध्यान दे सकते हैं।

24.1. एच. वेंकटचला अयंगर (पूर्वोक्त) के मामले में, इस न्यायालय की 3-न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने वसीयत के निष्पादन एवं प्रमाण से संबंधित मुद्दों के पहलुओं पर गौर किया तथा कुछ मौलिक मार्गदर्शक सिद्धांतों को प्रतिपादित किया जिनका लगातार पालन किया गया है एवं ऐसे मुद्दों से जुड़े लगभग सभी मामलों में लागू किया गया है। इस न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय के पैराग्राफ 18 से 22 में संश्लेषण एवं व्याख्या को निम्नानुसार उपयोगी रूप से पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है:-

18. वसीयत के प्रमाण के मामले में वास्तविक विधिक स्थिति क्या है? यह सर्वविदित है कि वसीयत का प्रमाण न्यायालयों में निर्णय हेतु एक आवर्ती विषय प्रस्तुत करता है तथा इस विषय पर बड़ी संख्या में न्यायिक उद्धोषणाएं होती रहती हैं। वसीयत का प्रस्ताव करने वाला या वसीयत के तहत दावा करने वाला पक्षकार निस्संदेह एक दस्तावेज़ को सिद्ध करने की कोशिश करता है और यह तय करने में कि इसे कैसे

सिद्ध किया जाना है, हमें अनिवार्य रूप से उन वैधानिक प्रावधानों का उल्लेख करना चाहिए जो दस्तावेजों के प्रमाण को नियंत्रित करते हैं इन उद्देश्य के लिये साक्ष्य अधिनियम की धारा 67 और 68 प्रासंगिक हैं। धारा 67 के तहत, यदि किसी दस्तावेज पर किसी व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किए जाने का लोप है, तो उक्त व्यक्ति के हस्ताक्षर उसकी लिखावट में तथा अधिनियम की धारा 45 और धारा 47 के तहत ऐसी लिखावट को सिद्ध करने के लिए विशेषज्ञों तथा संबंधित व्यक्ति की लिखावट से परिचित व्यक्तियों की राय को प्रासंगिक बनाया जाता है। धारा 68 विधि द्वारा सत्यापित किए जाने हेतु आवश्यक दस्तावेज के निष्पादन के प्रमाण से संबंधित है तथा यह प्रावधान करता है कि इस तरह के दस्तावेज का उपयोग साक्ष्यों के रूप में तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि कम से कम एक प्रमाणित करने वाले साक्षी को उसके निष्पादन को सिद्ध करने के उद्देश्य से नहीं बुलाया जाता है। ये प्रावधान उन आवश्यकताओं और प्रमाण की प्रकृति को निर्धारित करते हैं जिन्हें उस पक्षकार द्वारा संतुष्ट किया जाना चाहिए जो न्यायालय में किसी दस्तावेज पर निर्भर करता है। इसी भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 59 और धारा 63 भी प्रासंगिक हैं। धारा 59 में यह प्रावधान किया गया है कि स्वस्थचित्त वाला प्रत्येक व्यक्ति, जो अवयस्क नहीं है, वसीयत द्वारा अपनी संपत्ति का व्ययन कर सकता है तथा इस धारा के तीन दृष्टांत यह इंगित करते हैं कि इस संदर्भ में "स्वस्थचित्त वाला व्यक्ति" अभिव्यक्ति का क्या अर्थ है। धारा 63 में यह प्रावधान करती है कि वसीयतकर्ता वसीयत पर अपने चिह्न पर हस्ताक्षर करेगा या निशान

लगाएगा या उस पर उसकी उपस्थिति में तथा उसके निर्देश से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे तथा हस्ताक्षर या चिह्न इस तरह से किया जाएगा कि यह प्रतीत हो कि इसका उद्देश्य वसीयत के रूप में लेखन को प्रभावी बनाना था। इस धारा में यह भी कहा गया है कि वसीयत को दो या दो से अधिक साक्षियों द्वारा सत्यापित किया जाएगा जैसा कि निर्धारित किया गया है। इस प्रकार यह प्रश्न कि क्या प्रतिपादक द्वारा स्थापित वसीयत वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत सिद्ध होती है, इन प्रावधानों के आलोक में तय किया जाना चाहिए। क्या वसीयतकर्ता ने वसीयत पर हस्ताक्षर किए हैं? क्या वह इच्छा में प्रवृत्तियों की प्रकृति और प्रभाव को समझते थे? क्या उन्होंने वसीयत पर यह जानते हुए हस्ताक्षर किए थे कि उसमें क्या है?

मोटे तौर पर यह इन प्रश्नों का निर्णय है जो वसीयत के प्रमाण के प्रश्न पर निष्कर्ष की प्रकृति को निर्धारित करता है। यह कहना प्रथमदृष्टया सही होगा कि वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा निर्धारित अनुप्रमाणन की विशेष आवश्यकताओं को छोड़कर किसी भी अन्य दस्तावेज की तरह साबित करना होगा। जैसा कि अन्य दस्तावेजों के प्रमाण के मामले में होता है, इसलिए वसीयत के प्रमाण के मामले में गणितीय निश्चितता के साथ प्रमाण की उम्मीद करना व्यर्थ होगा। लागू की जाने वाली जांच ऐसे मामलों में विवेकपूर्ण चित्त की संतुष्टि की सामान्य जांच होगी।

19. हालांकि, एक महत्वपूर्ण विशेषता है जो वसीयत को अन्य दस्तावेजों से अलग करती है। अन्य दस्तावेजों के विपरीत वसीयत वसीयतकर्ता की मृत्यु से

बोलती है, और इसलिए, जब इसे किसी न्यायालय के समक्ष पेश किया जाता है, तो वसीयतकर्ता जो पहले ही दुनिया छोड़ चुका है, यह नहीं कह सकता है कि यह उसकी वसीयत है या नहीं; और यह पहलू स्वाभाविक रूप से प्रश्न के निर्णय में गंभीरता के एक तत्व का परिचय देता है कि क्या प्रस्तावित दस्तावेज़ दिवंगत वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत और वसीयतनामा साबित हुआ है।

फिर भी, वसीयत के प्रमाण से निपटने में न्यायालय उसी जांच पर शुरू करेगा जो दस्तावेजों के प्रमाण के मामले में होती है। प्रतिपादक से संतोषजनक साक्ष्य के माध्यम से यह दिखाने के लिए कहा जाएगा कि वसीयत पर वसीयतकर्ता द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे, कि संबंधित समय पर वसीयतकर्ता एक स्वस्थ और मन की स्थिति में था, कि वह स्वभाव की प्रकृति और प्रभाव को समझता था और अपनी स्वतंत्र इच्छा के दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करता था। आम तौर पर जब वसीयत के समर्थन में प्रस्तुत किया गया साक्ष्य निष्पक्ष, संतोषजनक और वसीयतकर्ता के दिमाग की ध्वनि और निपटान स्थिति और कानून द्वारा आवश्यक उसके हस्ताक्षर को साबित करने के लिए पर्याप्त होता है, तो अदालतें प्रतिपादक के पक्ष में निर्णय लेने में उचित होंगी। दूसरे शब्दों में, प्रतिपादक की जिम्मेदारी को केवल बताए गए आवश्यक तथ्यों के प्रमाण पर निर्वहन के लिए लिया जा सकता है।

20. हालाँकि, ऐसे मामले हो सकते हैं जिनमें वसीयत का निष्पादन संदिग्ध परिस्थितियों से घिरा हो सकता है। वसीयतकर्ता का कथित हस्ताक्षर बहुत अस्थिर एवं संदिग्ध हो सकता है तथा प्रतिपादक के मामले के

समर्थन में सिद्ध कि प्रश्न में हस्ताक्षर वसीयतकर्ता का हस्ताक्षर है, हस्ताक्षर की उपस्थिति से उत्पन्न संदेह को दूर नहीं कर सकता है; वसीयतकर्ता के मानसिक स्थिति बहुत कमजोर और असहज प्रतीत हो सकती है; तथा प्रस्तुत साक्ष्य वसीयतकर्ता की मानसिक क्षमता के बारे में वैध संदेह को दूर करने में सफल नहीं हो सकता है; वसीयत में किए गए स्वभाव प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में अप्राकृतिक, असंभव या अनुचित प्रतीत हो सकते हैं; या, वसीयत अन्यथा इंगित कर सकती है कि उक्त स्वभाव वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा तथा चित्त का परिणाम नहीं हो सकते हैं। ऐसे मामलों में न्यायालय स्वाभाविक रूप से यह उम्मीद करेगा कि दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में स्वीकार करने से पहले सभी वैध संदेहों को पूरी तरह से हटा दिया जाना चाहिए। इस तरह की संदिग्ध परिस्थितियों की उपस्थिति स्वाभाविक रूप से प्रारंभिक जिम्मेदारी को बहुत कठिन बना देती है; तथा, जब तक कि इसे संतोषजनक रूप से निर्वहन नहीं किया जाता है, न्यायालय दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में मानने के लिए अनिच्छुक होंगी। यह सच है कि, यदि प्रस्तावित वसीयत के निष्पादन के संबंध में अनुचित प्रभाव, धोखाधड़ी या जबरदस्ती के प्रयोग का आरोप लगाते हुए एक कैविएट दायर किया जाता है, तो ऐसे अभिवचनों को कैविएटकर्ता द्वारा सिद्ध करने की आवश्यकता हो सकती है; लेकिन, ऐसे अभिवचनों के बिना भी परिस्थितियां इस बात पर संदेह पैदा कर सकती हैं कि क्या वसीयतकर्ता वसीयत को निष्पादित करने में अपनी स्वतंत्र इच्छा से काम कर रहा था,

तथा ऐसी परिस्थितियों में, मामले में ऐसे किसी भी वैध संदेह को दूर करना प्रारंभिक जिम्मेदारी का एक हिस्सा होगा।

21. *** **

24.2. रानी पूर्णिमा देवी (पूर्वोक्त) में, इस न्यायालय ने एच. वेंकटचल अयंगर में उपरोक्त निर्णय का उल्लेख किया तथा आगे उन सिद्धांतों की व्याख्या की जो वसीयत को सिद्ध करने को नियंत्रित करते हैं:-

5. इससे पहले कि हम इस मामले के तथ्यों पर विचार करें, उन सिद्धांतों को निर्धारित करना उचित है जो वसीयत की पुष्टि को नियंत्रित करते हैं। इस न्यायालय द्वारा एच. वेंकटचाला अयंगर बनाम बी. एन. थिमाजम्मा, (1959) पूरक (1) एससीआर 426: एआईआर 1959 एससी 443 में इस पर विचार किया गया था। उस मामले में यह देखा गया कि वसीयत को साबित करने का तरीका आम तौर पर भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा वसीयत के मामले में निर्धारित सत्यापन की विशेष आवश्यकता को छोड़कर किसी अन्य दस्तावेज़ को साबित करने से भिन्न नहीं होता है। वसीयत साबित करने की जिम्मेदारी प्रतिपादक पर थी तथा वसीयत के निष्पादन के आसपास की संदिग्ध परिस्थितियों की अनुपस्थिति में वसीयत की क्षमता का प्रमाण तथा कानून द्वारा आवश्यक वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर जिम्मेदारी का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त थे। हालाँकि, जहाँ संदिग्ध परिस्थितियाँ थीं, वहाँ वसीयत को वास्तविक के रूप में स्वीकार करने से पहले न्यायालय की संतुष्टि के लिए उन्हें समझाने की जिम्मेदारी प्रतिपादक पर होगी। यदि कैविएटकर्ता अनुचित प्रभाव, धोखाधड़ी या जबरदस्ती

का आरोप लगाता है, तो उसे सिद्ध करने की जिम्मेदारी उस पर होगी। यहां तक कि जहां ऐसी कोई याचिकाएं नहीं थीं, लेकिन परिस्थितियों ने संदेह को जन्म दिया, यह प्रतिपादक के लिए था कि वह न्यायालय के अंतःकरण को संतुष्ट करे। इसके अलावा, इस मामले में संदिग्ध परिस्थितियों पर भी विचार किया गया। वसीयतकर्ता का कथित हस्ताक्षर बहुत अस्थिर एवं संदिग्ध हो सकता है तथा प्रतिपादक के मामले के समर्थन में साक्ष्य का प्रश्नगत हस्ताक्षर वसीयतकर्ता का हस्ताक्षर था, हस्ताक्षर की उपस्थिति से उत्पन्न संदेह को दूर नहीं किया जा सकता है। वसीयतकर्ता के चित्त की स्थिति बहुत कमजोर और असहज प्रतीत हो सकती है तथा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य वसीयतकर्ता की मानसिक क्षमता के बारे में वैध संदेह को दूर करने में विफल हो सकते हैं; वसीयत में किए गए स्वभाव प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में अप्राकृतिक, असंभव या अनुचित प्रतीत हो सकते हैं; या वसीयत अन्यथा इंगित कर सकती है कि उक्त स्वभाव वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा तथा चित्त का परिणाम नहीं हो सकते हैं। ऐसे मामलों में, न्यायालय स्वाभाविक रूप से उम्मीद करेगा कि दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में स्वीकार करने से पहले सभी वैध संदेहों को पूरी तरह से हटा दिया जाना चाहिए। इसके अलावा, एक प्रतिपादक स्वयं वसीयत के निष्पादन में एक प्रमुख भूमिका निभा सकता है जो उसे पर्याप्त लाभ प्रदान करता है। यदि ऐसा था तो इसे आम तौर पर वसीयत के निष्पादन में एक संदिग्ध परिस्थिति के रूप में माना जाता था तथा प्रतिपादक को स्पष्ट एवं संतोषजनक साक्ष्य द्वारा संदेह

को दूर करने की आवश्यकता होती थी। लेकिन जब भी संदिग्ध परिस्थितियाँ होती हैं तथा प्रतिपादक उन्हें हटाने में सफल हो जाता है, तब भी न्यायालय प्रोबेट देता है, हालांकि वसीयत अप्राकृतिक हो सकती है तथा पूरी तरह से या आंशिक रूप से निकट संबंधों को खत्म सकती है। (जोर दिया गया)

24.3. इंदु बाला बोस (पूर्वोक्त) के मामले में, इस न्यायालय ने पुनः कहा:

7. इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि वसीयत सिद्ध करने का तरीका उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा वसीयत के मामले में निर्धारित अनुप्रमाणन की विशेष आवश्यकता को छोड़कर किसी अन्य दस्तावेज को सिद्ध करने के तरीके से साधारणतः भिन्न नहीं है। वसीयत साबित करने का भार प्रतिपादक पर होता है तथा वसीयत के निष्पादन से संबंधित संदिग्ध परिस्थितियों की अनुपस्थिति में, वसीयती क्षमता का प्रमाण तथा वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर विधि द्वारा आवश्यक भार का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त होते हैं। हालाँकि जहाँ संदिग्ध परिस्थितियाँ होती हैं, वहाँ न्यायालय द्वारा वसीयत को वास्तविक स्वीकार करने से पहले न्यायालय की संतुष्टि हेतु उन्हें समझाने की जिम्मेदारी प्रतिपादक पर होती है। यहां तक कि जहाँ परिस्थितियां संदेह को जन्म देती हैं, यह प्रतिपादक के लिए है कि वह न्यायालय के अतःकरण को संतुष्ट करे। संदिग्ध परिस्थितियां वसीयतकर्ता के हस्ताक्षरों की वास्तविकता, वसीयतकर्ता के चित्त की स्थिति, वसीयत में किए गए स्वभाव अप्राकृतिक, प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में

असंभव या अनुचित होने के बारे में हो सकती हैं, या वसीयत में अन्य संकेत हो सकते हैं जो यह दर्शाते हैं कि वसीयतकर्ता का चित्त स्वतंत्र नहीं था। ऐसे मामले में न्यायालय स्वाभाविक रूप से उम्मीद करेगा कि दस्तावेज़ को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में स्वीकार करने से पहले सभी वैध संदेहों को पूरी तरह से हटा दिया जाना चाहिए। यदि प्रतिपादक स्वयं वसीयत के निष्पादन में एक प्रमुख भूमिका निभाता है जो उसे पर्याप्त लाभ प्रदान करता है, तो वह भी एक ऐसी परिस्थिति है जिसे ध्यान में रखा जाना चाहिए, तथा प्रतिपादक को स्पष्ट एवं संतोषजनक साक्ष्य द्वारा संदेह को दूर करने की आवश्यकता होती है। यदि प्रतिपादक संदिग्ध परिस्थितियों को दूर करने में सफल हो जाता है तो न्यायालय प्रोबेट देगी, भले ही वसीयत अप्राकृतिक हो तथा पूरी तरह से या आंशिक रूप से करीबी संबंधों को खत्म भी कर सकती है।

8. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि कोई भी परिस्थिति "संदिग्ध" परिस्थिति नहीं है। एक परिस्थिति "संदिग्ध" होगी जब वह सामान्य नहीं है या सामान्य स्थिति में सामान्य रूप से अपेक्षित नहीं है या एक सामान्य व्यक्ति से इसकी अपेक्षा नहीं की जाती है।" (जोर दिया गया)

24.4. हम जसवंत कौर (पूर्वोक्त) के मामले में संदेह से ढकी वसीयत के व्ययन हेतु उपयोगी सिद्धांतों का भी उल्लेख कर सकते हैं, जो इस प्रकार हैं:—

— 9. ऐसे मामलों में जहां वसीयत का निष्पादन संदेहात्मक है, उसका प्रमाण वादी एवं प्रतिवादी के बीच साधारण वाद नहीं है। आम तौर पर, एक प्रतिकूल कार्यवाही ऐसे मामलों में न्यायालय के अंतःकरण का मामला बन जाता है तथा पुनः विचार हेतु जो

उचित प्रश्न उठता है वह यह है कि क्या वसीयत के प्रतिपादक के नेतृत्व में साक्ष्य न्यायालय के अंतःकरण को संतुष्ट करने के लिए है कि वसीयत वसीयतकर्ता द्वारा विधिवत निष्पादित की गई थी। इस तरह की संतुष्टि तक पहुंचना तब तक असंभव है जब तक कि वसीयत स्थापित करने वाला पक्षकार वसीयत बनाने से संबंधित संदिग्ध परिस्थितियों का ठोस एवं विश्वसनीय स्पष्टीकरण नहीं देता है। (जोर दिया गया)

24.5. उमा देवी नांबियार (पूर्वोक्त) के मामले में, इस न्यायालय ने वसीयत से संबंधित मामले में विधि का व्यापक पुनर्विलोकन किया, जिसमें शशि कुमार बनर्जी व अन्य बनाम सुबोध कुमार बनर्जी व अन्य: एआईआर 1964 एससी 529, के मामले में इस न्यायालय की संविधान न्यायपीठ का निर्णय भी शामिल था। तथा पाया कि केवल प्राकृतिक उत्तराधिकारियों का बहिष्कार या उन्हें कम हिस्सा देना, अपने आप में संदिग्ध परिस्थिति नहीं मानी जाएगी। इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा:-

15. अधिनियम की धारा 63 विशेषाधिकार प्राप्त वसीयतों के निष्पादन से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि वसीयतकर्ता वसीयत पर हस्ताक्षर करेगा या अपना चिह्न लगाएगा या उस पर उसकी उपस्थिति में तथा उसके निर्देश से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे। इसमें आगे कहा गया है कि वसीयत को दो या दो से अधिक साक्षियों द्वारा सत्यापित किया जाएगा, जिनमें से प्रत्येक ने वसीयतकर्ता को वसीयत पर हस्ताक्षर करते या अपना चिह्न लगाते देखा है या किसी अन्य व्यक्ति को वसीयतकर्ता की उपस्थिति में और उसके निर्देश से वसीयत पर हस्ताक्षर करते देखा है और प्रत्येक गवाह वसीयतकर्ता की उपस्थिति में

वसीयत पर हस्ताक्षर करेगा, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 (संक्षेप में साक्ष्य अधिनियम) वसीयत के प्रमाण में प्रमाणित करने वाले साक्षी की जांच को अनिवार्य करती है, चाहे वह पंजीकृत हो या नहीं। इस न्यायालय के कई निर्णयों में वसीयत पर आधारित मामले से निपटने के दौरान साक्ष्य के तरीके एवं दायित्व तथा न्यायालय को सौंपे गए कर्तव्य से संबंधित विधि की काफी विस्तार से जांच की गई है। शशि कुमार बनर्जी के मामले में इस न्यायालय की एक संविधान न्यायपीठ ने संक्षिप्त रूप से विधि में केंद्रीय स्थिति का संकेत दिया: (एआईआर पी. 531, पैरा 4) "वसीयत साबित करने का तरीका भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा वसीयत के मामले में निर्धारित अनुप्रमाणन की विशेष आवश्यकता के अलावा किसी अन्य दस्तावेज को साबित करने के तरीके से अलग नहीं है। वसीयत को साबित करने की जिम्मेदारी प्रतिपादक पर होती है तथा वसीयत के निष्पादन से संबंधित संदिग्ध परिस्थितियों की अनुपस्थिति में, वसीयत की क्षमता का प्रमाण व विधि द्वारा आवश्यक वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर जिम्मेदारी का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त होते हैं। हालाँकि जहाँ संदिग्ध परिस्थितियाँ होती हैं, वहाँ न्यायालय द्वारा वसीयत को वास्तविक स्वीकार करने से पहले न्यायालय की संतुष्टि के लिए उन्हें समझाने की जिम्मेदारी प्रतिपादक पर होती है। जहाँ कैविएटकर्ता अनुचित प्रभाव, धोखाधड़ी एवं जबरदस्ती का आरोप लगाता है, उसे साबित करने की जिम्मेदारी उस पर होती है। यहां तक कि जहाँ ऐसी कोई अभिवचन नहीं हैं, लेकिन परिस्थितियाँ संदेह पैदा

करती हैं, यह प्रतिपादक के लिए है कि वह न्यायालय के अंतःकरण को संतुष्ट करे। संदिग्ध परिस्थितियां वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर की वास्तविकता, वसीयतकर्ता के चित्त की स्थिति, वसीयत में किए गए स्वभाव अप्राकृतिक, असंभव या प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में अनुचित होने के बारे में हो सकती हैं या वसीयत में अन्य संकेत हो सकते हैं जो यह दर्शाते हैं कि वसीयतकर्ता का चित्त स्वतंत्र नहीं था। ऐसे मामले में न्यायालय स्वाभाविक रूप से उम्मीद करेगा कि दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में स्वीकार करने से पहले सभी वैध संदेह को पूरी तरह से हटा दिया जाना चाहिए। यदि प्रतिपादक स्वयं वसीयत के निष्पादन में भाग लेता है जो उसे पर्याप्त लाभ प्रदान करता है, तो वह एक ऐसी स्थिति है जिसे ध्यान में रखा जाना चाहिए, तथा प्रतिपादक को स्पष्ट एवं संतोषजनक साक्ष्य द्वारा संदेह को दूर करने की आवश्यकता होती है। यदि प्रतिपादक संदिग्ध परिस्थितियों को दूर करने में सफल हो जाता है तो न्यायालय प्रोबेट देगी, भले ही वसीयत अप्राकृतिक हो और पूरी तरह से या आंशिक रूप से करीबी संबंधों को खत्म कर सकती है।”

16. वसीयत को उत्तराधिकार के सामान्य तरीके को बदलने के लिए निष्पादित किया जाता है एवं स्वभाविक रूप से इसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक उत्तराधिकारियों के हिस्से को कम या वंचित उससे वंचित किया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति अपनी संपत्ति को अपने प्राकृतिक उत्तराधिकारियों को देने का इरादा रखता है, तो वसीयत को निष्पादित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। यह सच है कि वसीयत के

प्रतिपादक को सभी संदिग्ध परिस्थितियों को दूर करना पड़ता है। संदेह का अर्थ है शंका, अनुमान या अविश्वास। लेकिन यह तथ्य कि प्राकृतिक उत्तराधिकारियों को या तो बाहर कर दिया गया है या उन्हें कम हिस्सा दिया गया है, स्वयं के माध्यम से, विशेष रूप से उस मामले में एक संदिग्ध परिस्थिति नहीं मानी जा सकती है जहां वसीयत एक संतान के पक्ष में की गई है। जैसा कि पी.पी.के. गोपालन नाम्बियार बनाम पी.पी.के. बालकृष्णन नाम्बियार व अन्य [1995] 2 एससीआर 585, में अभिनिर्धारित किया गया है: वसीयत के प्रतिपादक का कर्तव्य है कि वह सभी संदिग्ध लक्षणों को हटा दे, लेकिन इसमें वास्तविक, सटीक तथा वैध संदिग्ध विशेषताएं होनी चाहिए, न कि संदेहात्मक चित्त की कल्पना, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि प्रतिपादक संदिग्ध लक्षणों को दूर करने में सफल हो जाता है, तो न्यायालय को वसीयत को प्रभावी बनाना होगा, भले ही वसीयत इस अर्थ में अप्राकृतिक हो कि उसने पूरी तरह से या आंशिक रूप से करीबी संबंधों को खत्म कर दिया हो।.....रवीन्द्रनाथ मुखर्जी व अन्य. बनाम वि.प्र. के माध्यम पंचानन बनर्जी (मृत) व अन्य: एआईआर 1995 एससी 1684 में यह कहा गया था कि प्राकृतिक उत्तराधिकारियों के वंचित होने की परिस्थिति में कोई संदेह नहीं होना चाहिए क्योंकि वसीयत के निष्पादन के पीछे का पूरा विचार उत्तराधिकार की सामान्य रेखा में हस्तक्षेप करना है तथा इसलिए, प्राकृतिक उत्तराधिकारियों को वसीयत के हर मामले में प्रतिबंधित कर दिया जाएगा। बेशक, यह हो सकता है

कि कुछ मामलों में वे पूर्ण रूप से तथा कुछ मामलों में आंशिक रूप से प्रतिबंधित हैं।

24.6. *** **

24.7. *** **

24.8. हमें बार में उद्धृत सभी और अन्य निर्णयों के संदर्भों को बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है, जो अनिवार्य रूप से दिए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों में इसे लागू करते हुए उपरोक्त सिद्धांतों पर आगे बढ़ते हैं। यह इंगित करना पर्याप्त होगा कि सिविल अपील सं. 6076/2009 में हाल के एक निर्णय में: शिवकुमार व अन्य बनाम शरणबसप्पा व अन्य में दिनांक 24.04.2020 को निर्णय लिया, इस न्यायालय ने प्रासंगिक निर्णयों के अध्यनोपरांत, वसीयत के प्रमाण द्वारा संबंधित न्यायिक प्रक्रिया को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत किया है:

1. आम तौर पर, एक वसीयत को किसी भी अन्य दस्तावेज की तरह साबित करना पड़ता है; जिस जांच को लागू किया जाना है वह विवेकपूर्ण चित्त की संतुष्टि की सामान्य जांच है। अन्य दस्तावेजों के प्रमाण को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों की तरह, वसीयत के मामले में भी गणितीय सूक्ष्मता के साथ प्रमाण पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए।
2. चूंकि उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 के अनुसार, एक वसीयत को अनुप्रमाणित करने की आवश्यकता होती है, इसलिए इसका उपयोग तब तक साक्ष्य के रूप में नहीं किया जा सकता है जब तक कि कम से कम एक अनुप्रमाणक साक्षी को उसके निष्पादन को साबित करने के उद्देश्य से नहीं बुलाया जाता है, यदि कोई अनुप्रमाणक साक्षी जीवित है तथा साक्ष्य देने में सक्षम है।

3. वसीयत की अनूठी विशेषता यह है कि यह वसीयतकर्ता की मृत्यु के बारे में बताती है तथा इसलिए, इसका निर्माता उन परिस्थितियों के बारे में अभिसाक्ष्य देने हेतु उपलब्ध नहीं है जिनमें इसे निष्पादित किया गया था। यह प्रश्न के निर्णय में गंभीरता के एक तत्व का परिचय देता है कि क्या प्रतिपादक दस्तावेज़ वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत है। स्वाभाविक रूप से, प्रारंभिक भार प्रतिपादक पर होता है, लेकिन यह माना जा सकता है कि यह मुख्य रूप से आवश्यक तथ्यों के प्रमाण पर किया गया है जो वसीयत बनाने की शुरुआत करते हैं।

4. जिस मामले में वसीयत का निष्पादन संदिग्ध परिस्थितियों से संबंधित है, वह एक अलग आधार पर खड़ा है। संदिग्ध परिस्थितियों की उपस्थिति प्रतिपादक पर भार अधिरोपित करती है और इसलिए, ऐसे मामलों में जहां दस्तावेज़ के निष्पादन पर परिस्थितियों से संदेह पैदा होता है, प्रतिपादक को दस्तावेज़ को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में स्वीकार करने से पूर्व सभी वैध संदेहों को दूर करना चाहिए।

5. यदि वसीयत को चुनौती देने वाला व्यक्ति वसीयत के निष्पादन के संबंध में मनगढ़ंत आरोप लगाता है या धोखाधड़ी, अनुचित प्रभाव, जबरदस्ती आदि का आरोप लगाता है, तो ऐसे अभिवचन उसके द्वारा साबित किये जाने चाहिए, लेकिन ऐसे अभिवचनों की अनुपस्थिति में भी, वसीयत के निष्पादन से संबंधित परिस्थितियों से संदेह पैदा हो सकता है या यह कि क्या वसीयत वास्तव में वसीयतकर्ता द्वारा निष्पादित की गई थी और/या क्या वसीयतकर्ता अपनी स्वतंत्र इच्छा से काम कर रहा था। ऐसी स्थिति में, यह फिर से प्रतिपादक

की प्रारंभिक जिम्मेदारी का हिस्सा है कि वह मामले में सभी तर्कसंगत संदेहों को दूर करे।

6. कोई परिस्थिति तब "संदिग्ध" होती है जब वह सामान्य नहीं होती है या "सामान्य स्थिति में सामान्य रूप से अपेक्षित नहीं होती है या सामान्य व्यक्ति से इसकी अपेक्षा नहीं की जाती है"। जैसा कि इस न्यायालय ने कहा है, संदिग्ध विशेषताएं 'वास्तविक, सार्थक तथा वैध' होनी चाहिए, न कि केवल संदेह करने वाले चित्त की 'कल्पना' होनी चाहिए।

7. इस बारे में कि क्या कोई विशेष विशेषता या विशेषताओं का एक समूह संदिग्ध के रूप में योग्य है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। अस्थिर या संदिग्ध हस्ताक्षर; वसीयतकर्ता का कमजोर या अनिश्चित चित्त; संपत्ति का अनुचित प्रकृति; कानूनी उत्तराधिकारियों तथा विशेष रूप से आश्रितों का अन्यायपूर्ण बहिष्कार; इसके तहत लाभार्थी द्वारा वसीयत बनाने में एक सक्रिय या प्रमुख भाग आदि कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जो संदेह को जन्म दे सकती हैं। ऊपर उल्लिखित परिस्थितियाँ केवल उदाहरणात्मक हैं तथा किसी भी तरह से संपूर्ण नहीं हैं क्योंकि ऐसी कोई भी परिस्थिति या परिस्थितियाँ हो सकती हैं जो वसीयत के निष्पादन के बारे में वैध संदेह को जन्म दे सकती हैं। दूसरी ओर, संदिग्ध होने की योग्यता रखने वाली किसी भी परिस्थिति को प्रतिपादक द्वारा वैध रूप से समझाया जा सकता है। हालांकि, इस तरह के संदेह या संदेहों को केवल स्वस्थ तथा व्ययन के प्रमाण के साथ वसीयतकर्ता की मानसिक स्थिति एवं उसके हस्ताक्षर के अनुप्रमाणन से दूर नहीं किया जा सकता है।

8. न्यायिक अंतःकरण की संतुष्टि की कसौटी तब लागू होती है जब वसीयतकर्ता की वसीयत के रूप में प्रस्तावित दस्तावेज़ संदिग्ध परिस्थितियों से घिरा होता है। इस तरह की जांच को लागू करते समय, न्यायालय स्वयं को इन गंभीर प्रश्नों के लिए संबोधित करेगा कि क्या वसीयतकर्ता ने वसीयत की विषय-वस्तु से अवगत रहते हुए तथा वसीयत में स्वभाव की प्रकृति और प्रभाव को समझने के बाद वसीयत में व्ययन पर हस्ताक्षर किए थे?

9. अंतिम विश्लेषण में, जहां वसीयत का निष्पादन संदेह से ढकी हुई है, यह अनिवार्य रूप से न्यायालय की न्यायिक अंतःकरण का मामला है और जो पक्षकार वसीयत स्थापित करता है, उसे वसीयत के आसपास की संदिग्ध परिस्थितियों का ठोस एवं विश्वसनीय स्पष्टीकरण देना होता है।

18. प्रश्नगत वसीयत के प्रोबेट की प्रार्थना को अस्वीकार करते हुए, इस न्यायालय ने उपरोक्त सिद्धांतों को नोट किया, पक्षकारों के साक्ष्यों एवं अभिवचनों, वसीयत (प्र.अभि.सा. 2/क) साथ ही दिनांक 26.04.2018 के निर्णय में अभिव्यक्त विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों, विशेषकर, विचारण न्यायालय के समक्ष प्रतिकूल सिद्ध होने वाले उन तीन कारणों को ध्यान में रखा है। उपरोक्त सिद्धांतों पर ध्यान देने के बाद, इस न्यायालय ने पक्षकारों के अभिवचनों और साक्ष्यों, वसीयत (प्र.अभि.सा.2/क) की विषय-वस्तु और विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों पर ध्यान दिया है, जैसा कि दिनांक 26.04.2018 के निर्णय में व्यक्त किया गया है, विशेष रूप से, वे तीन कारण

जो विद्वान विचारण न्यायालय के साथ वजन करते हैं, जबकि प्रश्नगत वसीयत की जांच के लिए अनुरोध को अस्वीकार करते हैं।

19. यह प्रस्तुत किया गया था कि जिन तीन कारकों ने विद्वान विचारण न्यायालय के अनुसार वसीयतनामा द्वारा वसीयत के निष्पादन के संबंध में संदेह किया गया था, कहा जाता है कि किसी भी पक्षकार द्वारा अंतिम प्रस्तुतियों के दौरान उजागर नहीं किया गया था, लेकिन विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पेश किया गया था। पहला यह है कि अभि.सा.1 ने प्रस्तुत किया कि प्रश्नगत वसीयत तीस हजारी न्यायालय परिसर में एक अधिवक्ता द्वारा उनके कक्ष में तैयार की गई थी एवं उन अधिवक्ता का नाम श्री रूपचंद है, जबकि वसीयत से पता चलता है कि इसका मसौदा एवं हस्ताक्षर अधिवक्ता श्री देव कुमार तैयार किये गये थे तथा न की श्री रूपचंद द्वारा। दूसरा यह है कि वसीयत के निष्पादन के दिन, जब याचिकाकर्ता ने अभि.सा.1 के रूप में जांच की, उन्होंने कहा कि उसने वसीयतनामा तथा दोनों अनुप्रमाणक साक्षी के साथ, श्री कमल कुमार शर्मा एवं श्री ज्ञानेंद्र सिंह एक टी.एस.आर. में बैठकर तीस हजारी न्यायालय में गए, अर्थात् 4 व्यक्ति वसीयत के निष्पादन हेतु दिनांक 04.04.2007 को एक टी.एस.आर. में बैठकर तीस हजारी न्यायालय पहुँचें, जबकि अभि.सा.2 ने कहा कि वह याचिकाकर्ता एवं वसीयतकर्ता के साथ वसीयत के निष्पादन हेतु दिनांक 04.04.2007 को एक टी.एस.आर. में तीस हजारी न्यायालय पहुँचें, जिसका अर्थ है कि तीन व्यक्ति एक टी.एस.आर. में

तीस हजारी पहुँचें थे। तीसरा कारक जो विद्वान विचारण न्यायालय के लिए प्रतिकूल था, वह यह है कि अभि.सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में पुष्टि/अभिसाक्ष्य में कहा कि चूंकि वह अशिक्षित था, इसलिए उसे अधिवक्ता द्वारा वसीयत की विषय-वस्तु को पढ़ा गया था। हालाँकि, साक्षी द्वारा अपने शपथ-पत्र या प्रतिपरीक्षा में स्वयंसेवा के माध्यम से यह दावा नहीं किया गया है कि वसीयत की विषय-वस्तु पर वसीयत भी एक अधिवक्ता द्वारा पढ़ी गई थी। विद्वान विचारण न्यायालय के अनुसार यह एक आयातित दावा था जिसे याचिकाकर्ता के सकारात्मक साक्ष्य में शामिल किया गया था क्योंकि वसीयतकर्ता अशिक्षित थी। वसीयत से संबंधित उपरोक्त संदिग्ध परिस्थितियों से निपटने के दौरान, विद्वान विचारण न्यायालय ने याचिका को खारिज कर दिया।

20. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 के अनुसार वसीयत के उचित निष्पादन हेतु बुनियादी तत्व निम्नलिखित हैं:-

- (i) वसीयतकर्ता वसीयत पर हस्ताक्षर करेगा और अपना निशान लगाएगा।
- (ii) वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर या निशान को इस तरह रखा जाएगा कि इसका उद्देश्य वसीयत के रूप में लेखन को प्रभावी बनाएगा।
- (iii) वसीयत को दो या दो से अधिक साक्षियों द्वारा सत्यापित किया जाएगा।

(iv) उक्त साक्षी में से प्रत्येक ने वसीयतकर्ता का हस्ताक्षर देखा होगा या वसीयत पर अपना निशान लगाया होगा तथा प्रत्येक साक्षी को वसीयतकर्ता की उपस्थिति में वसीयत पर हस्ताक्षर करने चाहिए थे।

21. वसीयत को साबित करने की प्रारंभिक जिम्मेदारी हमेशा प्रतिपादक पर होती है, लेकिन एक बार जब वह बोझ उतर जाता है, तो कोई भी संदेह अकेले न्यायिक निर्णय का आधार नहीं बन सकता है; तथा संदेह के बारे में किसी भी सुझाव की न्यायालय द्वारा जांच की जानी चाहिए, जबकि संदेह करने वाले चित्त के अनुमानों एवं अटकलों से बचा जाना चाहिए। इसमें वास्तविक, सटीक तथा वैध संदिग्ध विशेषताएं होनी चाहिए जिनके लिए प्रस्तावित वसीयत पर सवाल उठाया जा सकता है।

22. पहला मौलिक पहलू यह है कि क्या वसीयतकर्ता वसीयत की विषय-वस्तु को समझता है। इस न्यायालय ने अभिलेख की विषय-वस्तु की सावधानीपूर्वक जांच की है। आक्षेपित निर्णय के पैरा 25 को सूचीबद्ध करना आवश्यक है जिसमें विद्वान विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि प्रत्यर्थी सं. 3 इसे बनाये नहीं रख सकता है तथा अपीलार्थी के पक्ष में मुद्दे का निर्णय नहीं लिया जा सकता है। इस निष्कर्ष को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

वसीयत के परिवर्णन के अवलोकन से पता चलता है कि वसीयतकर्ता ने स्वयं को संपत्तियों के पूर्ण स्वामी होने का दावा नहीं किया था। उसने दोनों संपत्तियों में केवल 1/5 वें हिस्से की सीमा तक मालिक होने का दावा किया था। प्रत्यर्थी सं. 3 ने

मात्र यह कहा है कि संपत्ति पैतृक थी लेकिन इसमें वह किस हिस्से का दावा कर रहा है, इसके बारे में कोई और दावा नहीं किया गया है। उनके अभिवचन हैं कि स्वर्गीय सुमार्ता (पिता) और वसीयतकर्ता (माता) के सभी उत्तराधिकारियों का संपत्ति संख्या 20 में समान हिस्सा है। हालाँकि, यह प्रत्यर्थी सं. 3 के लिए अनिवार्य था। उस विशिष्ट हिस्से के बारे में अनुरोध किया है जिसका वह इस संपत्ति में दावा कर रहा था। चूँकि पिता (सुमार्ता) की मृत्यु वसीयतकर्ता (सुमार्ता की पत्नी) से पहले हो गई थी, इसलिए यह स्वाभाविक है कि सुमार्ता का हिस्सा उनकी पत्नी और बच्चों को दिया गया क्योंकि यह माना जाता है कि उनकी मृत्यु निर्वसीयत हुई थी। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी सं. 3 को इस बात पर जोर देना चाहिए था कि संपत्ति में वसीयतकर्ता का 1/5 वां हिस्सा नहीं था। संपत्ति में वसीयतनामा द्वारा प्राख्यायित किए गए हिस्से को चुनौती देने के अलावा, उन्होंने केवल यह आरोप लगाया कि वसीयतकर्ता याचिकाकर्ता को पूरी संपत्ति नहीं दे सकता था। हालाँकि, तथ्य यह है कि वसीयतकर्ता ने दोनों संपत्तियों में केवल अपने हिस्से की वसीयत की है, जो उसने दोनों संपत्तियों में 1/5 वें हिस्से तक होने का प्राख्यान किया है।

23. इस प्रकार, अपीलार्थी का परिसाक्ष्य, उसकी प्रतिपरीक्षा एवं अनुप्रमाणक साक्षियों में से एक अभि.सा.2 की प्रतिपरीक्षा की पूरी तरह से जांच करने के बाद, यह दिखाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं लाया गया है कि वसीयतकर्ता को वसीयत (प्र.अभि.सा.2/क) की विषय-वस्तु के बारे में जानकारी नहीं थी। इसके अलावा, निर्विवाद रूप से, प्रतिवादी सं. 3 ने अपनी आपत्तियों को खारिज करने के संबंध में विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्ष को चुनौती देने के लिए किसी भी प्रति अपील को प्राथमिकता नहीं दी है।

24. वर्तमान मामले में, विवाद में यह नहीं है कि वसीयत के निष्पादन के समय वसीयतकर्ता मानसिक रूप से स्वस्थ था। इसके अलावा वसीयतकर्ता के अंगूठे की छाप को भी प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा विवादित नहीं किया जा सकता है जो अभि.सा.1 तथा अभि.सा.2 के अभिसाक्ष्य द्वारा साबित होता है। प्रत्यर्थी सं. 3 यह स्थापित करने के लिए कोई ठोस सबूत पेश नहीं कर सका कि वसीयत (प्र.अभि.सा.2/क) वसीयत की मृत्यु के बाद तैयार की गई थी या वसीयत पर वसीयत के अंगूठे की छाप नहीं लगाई गई थी। विद्वान विचारण न्यायालय वसीयत के निष्पादन के लिए याचिकाकर्ता एवं वसीयतनामा के साथ तीस हजारी न्यायालयों में जाने वाले व्यक्तियों की संख्या में विसंगति से प्रभावित था। हालाँकि, याचिकाकर्ता, अभि.सा.1 तथा अनुप्रमाणक साक्षी, अभि.सा.2 के अभिसाक्ष्यों से यह अभिलेख पर स्थापित होता है कि अभि.सा.2 याचिकाकर्ता एवं वसीयतकर्ता के साथ दिनांक 04.04.2007 को था, तथा वे वसीयत के निष्पादन हेतु तीस हजारी न्यायालय में गए थे।

25. याचिकाकर्ता ने दलील दिया है कि वह एक वरिष्ठ नागरिक है जिसकी आयु लगभग 60 वर्ष है तथा वह लगभग 10 वर्षों के बाद वसीयत के निष्पादन के बारे में अभिसाक्ष्य देने आया था तथा उसके लिए इतने लंबे समय के बाद अधिवक्ता का नाम याद रखना मुश्किल हो सकता है। मान लीजिए, उक्त कातिब वसीयत का अनुप्रमाणक गवाह नहीं था। हालाँकि, अभि.सा.1 तथा अभि.सा.2 दोनों ने कहा कि वसीयत तीस हजारी न्यायालय के एक अधिवक्ता द्वारा तैयार

की गई थी। इसके अलावा, अभि.सा.1 ने यह भी कहा कि वह श्री रूपचंद, लंबे समय तक अधिवक्ता रहे तथा जहाँ तक उनकी जानकारी है, से नहीं मिले हैं, वे अभी भी जीवित है, लेकिन वे एक बूढ़े व्यक्ति है। केवल इसलिए कि याचिकाकर्ता; वसीयत के प्रतिपादक ने वसीयत को कातिब का गलत नाम दिया है, वसीयत के निष्पादन को गलत नहीं ठहराता है।

26. विद्वान विचारण न्यायालय ने यह भी नोट किया कि एकमात्र आक्षेपकर्ता, प्रत्यर्थी सं. 3 वसीयत ने इन आधारों पर प्रोबेट के अनुदान पर भी आपत्ति नहीं जताई थी जैसा कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा स्वप्रेरणा संज्ञान लिया गया था। पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा नोट की गई तीन परिस्थितियाँ संदिग्ध हैं जब वसीयत का निष्पादन अन्यथा भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 के अनुसार भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के अनुरूप साबित होता है।

27. मेरे विचार में, अभि.सा.2 के अभिसाक्ष्य, अनुप्रमाणक साक्षी को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। प्रत्यर्थी सं. 3 एक सामान्य आरोप लगाने के अलावा किसी भी संदिग्ध परिस्थिति को इंगित करने में समर्थ नहीं है जो दिनांक 04.04.2007 की वसीयत के प्रोबेट के अनुदान को अक्षम कर देगा।

28. मामले को ध्यान में रखते हुए, अपील स्वीकार की जाती है। दिनांक 26.04.2018 के आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाता है तथा वसीयत (प्र.अभि.सा.2/क) के संबंध में प्रोबेट अपीलार्थी/याचिकाकर्ता द्वारा भुगतान किए

जाने वाले आवश्यक स्टाम्प शुल्क तथा अदायगी के भुगतान के अधीन है। अपीलार्थी/याचिकाकर्ता वसीयत के तहत एकमात्र लाभार्थी है, उसे किसी भी प्रतिभूति बंधपत्र को प्रस्तुत करने से छूट दी गई है। हालाँकि, वह विद्वान विचारण न्यायालय की संतुष्टि के लिए प्रशासन बंधपत्र दाखिल करेगा, जिसके लिए मामले को विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष दिनांक 11.03.2024 को सूचीबद्ध किया जाएगा।

न्या., शालिंदर कौर

फरवरी 05, 2024

एसयू

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।